रसिककवि लोलिम्बराज का साहित्य वैभव

गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'

आयुर्वेद जगत् में वैद्य जीवन के रचयिता रसिक कवि लोलिम्बराज की बड़ी ख्याति हैं ये बड़े प्रतिभाशाली व्यक्ति थें इनकी यह प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। आप एक आशुकवि और सिद्धहस्त चिकित्सक होने के साथ ही उच्चकोटि के संगीताचार्य भी थे। उनका तत्कालीन राजा-महाराजा और शाह-बादशाहों के यहाँ अच्छा सम्मान था।

लोलिम्बराज की जन्मभूमि 'जुन्नर' बताई जाती है, जो महाराष्ट्र के पूना जिले के अन्तर्गत है। इनके पिता का नाम दिवाकर भट्ट था, जो अत्यन्त आस्तिक और कर्मनिष्ठ महाराष्ट्रीयन ब्राह्मण थे। आपको वृद्धावस्था में सूर्याराधन से लोलिम्बराज ही इकलौती सन्तान प्रापत हुई थी। इसलिये उनके लालन-पालन में आपने कोई कमी नहीं रखी, परन्तु लोलिम्बराज के बाल्यकाल में ही वे परलोकगामी हो गये। इसी से लोलिम्बराज की शिक्षा-दीक्षा का समुचित प्रबन्ध नहीं हो सका। असहाय माता पढाने-लिखाने का प्रबन्ध नहीं कर सकी। शिक्षा के अभाव में वे उदण्ड होते गये। ग्रामवासी उनकी उदण्डता के विषय में माता को आकर उल्हाना देते रहते थे। यहाँ तक कि उनके साथी उन्हें 'मूर्ख' तक कह कर चिढाने लगे थे। जब वे बड़े हुये तो उन्हें अपनी मूर्खता का अहसास हुआ और वे अपनी अज्ञता पर पश्चात्ताप करने लगे। आखिर एक दिन वे चुपचाव अकेले ही घर से निकल गये। जुन्नर से आप सीधे सप्तशृंगी देवी के मन्दिर की ओर चले गये जो नासिक जिले में स्थित है। वहाँ जाकर वे अपनी परम निष्ठा और भक्ति के साथ देवी की आराधना में संलग्न हो गये। माता भगवती उनकी भक्ति से प्रसन्न हो गई और साक्षात् प्रकट होकर वाक्सिद्धि, घी, धृति, स्मृति और श्री की प्राप्ति का वरदान देकर अन्तर्धान हो गई। नवीन आलोक से प्रकाशमान होकर लोलिम्बराज प्रसन्न होते हुये अपने गाँव जुन्नर लौट आये।

उस वर प्राप्ति के फलस्वरूप लोलिम्बराज को वाक्सिद्धि प्राप्त हो गई थी, वे जो बात कह देते वह प्रयः सत्य होती थी। धीरे-धीरे उनकी कीर्ति चारों ओर फैलने लगी और राजा-महाराजाओं के यहाँ भी उनका सम्मान होने लगा। उस समय दक्षिण में बीजापुर का सुलतान इब्राहिम आदिलशाह द्वितीय (1580 से 1626ई.) सबसे अधिक शक्तिशाली माना जाता था। उसको जब लोलिम्बराज के विषय में जानकारी मिली तो उसने शाही पालकी भेजकर उन्हें आदरपूर्वक अपने दरबार में बुलाया और प्रश्न किया कि– 'मेरी बेगम गर्भिणी है, बताओ उसके क्या होगा?' इस पर आपने निर्भय होकर उत्तर दिया कि

'यदि मेरी बात सच निकली तो आपको अपनी पुत्री मुझे ब्याहनी होगी।' बादशाह ने यह बात स्वीकार कर ली तब आपने कहा कि– 'बेगम साहिबा के पुत्र होगा।'

कुछ समय बाद लोलिम्बराज काा वचन सत्य हुआ और बादशाह ने खुश होकर अपनी पुत्री जिसका नाम 'मुरासा' था, लोलिम्बराज को अर्पण कर दी। लोलिम्बराज ने बडे गर्व के साथ उससे शादी कर ली और उसका नाम 'रत्नकला' रख लिया। बीजापुर के सुल्तान ने उन्हें प्रसन्न होकर अपनी बेटी ही नहीं दी अपितु उनकी विद्वता और काव्य कौशल से प्रभावित होकर 'कवि-पातशाह' की पदवी भी दी थी, जिसका उल्लेख उनके काव्यग्रन्थों में मिलता है। 'वैद्यावतंस' नामक कृति के प्रारम्भ में आपने स्वये के लिए 'कविकुलसुलतानो लोलिम्बराजः' और अन्त में 'लोलिम्बराजः कविपातशाह'' लिखा है।

लोलिम्बराज द्वारा लिखे गये ग्रन्थों के अन्वेषण का महत्वपूर्ण कार्य डॉ. श्री ब्रह्मानन्द त्रिपाठी (वाराणसी) ने किया। पहले इनका लिखा हुआ केवल 'वैद्य जीवन' ही मिलता था, किन्तु त्रिपाठी जी ने विभिन्न स्थानों से इनके पाँच अन्य ग्रन्थों को भी प्राप्त कर शुद्ध कर प्रकाशित करवाया। इस प्रकार इनके लिखे हुये छह ग्रन्थ हैं, जिनमें दो मराठी भाषा में लिखे हुये हैं, शेषा चार संस्कृत भाषा में लिखे हुये हैं। इनमें प्रथम ग्रन्थ 'वैद्यावतंस' है जो 172 पद्यात्मक एक लघु निघन्टु है। निघन्टु का साधारण अर्थ कोष समझा जाता है किन्तु आयुर्वेद के निघन्टु ग्रन्थों मे ंऔषध द्रव्य और आहार द्रव्यों के गुणधर्म वर्णित हैं। द्वितीय रचना 'चमत्कार चिन्तामणि' है, जो पाँच विलासों (खण्डों) में वर्णित है। इसमें कई चमत्कारपूर्ण औषधयोगों का वर्णन है। इनका तीसरा काव्यमय प्रयोग ग्रन्थ 'वैद्यजीवन' है, जो सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इसके कई पद्य वैद्यों की जबान पर हैं। इसमें स्थित कई योग वैद्यलोग अपनी चिकित्सा में प्रयुक्त करते हैं। 'लंवगादिवटी', 'रसोनादिवटी' आदि प्रसिद्ध योग वैद्य जीवन के ही हैं।

रसिक कवि ने अपनी प्रियतमा रत्नकला को सम्बोधित कर लिखा है। अपनी प्राणप्रिया को इस वैद्य जीवन में उसी प्रकार मोहक एवं सुललित सम्बोधनों से सम्बोधित किया है, जिस प्रकार कालिदास ने श्रुतबोध और ऋतुसंहार में अपनी प्रियतमा को किया है।

'वैद्यजीवन' के पाँचों खण्डों को कवि ने विलास नाम दिया है। स्त्रियों के शृंगार से उत्पन्न हाव-भाव की क्रियायें विलास कहलाती हैं। इन खण्डों में अपनी पत्नी के हाव-भावों को व्यक्त करते हुये और तदनुरूप रूप-यौवनपूर्ण सम्बोधनों को व्यक्त करते हुये लोलिम्बराज ने अपनी प्रियतमा के लिये औषधयोगों का वर्णन किया है। प्रायः प्रत्येक छन्द में मधुरचारिणि, नितम्बिनि, काममदालसे, कोमलकण्ठि, अरविन्दवन्द्यनयने, तन्वङ्गि, अखण्डितकारत्कालकलानिधिसमानने, हेमलशस्तनि, विलासदृष्टे, धृतकामकले, कोकिलकोमलस्वरे, ताम्बूल शालिवदने, प्रमदारूपमदापहारिणि, पीयूषमधुराधरे, कृशोदरि, चारुतिकुरे और कन्दर्पवर्द्धिनि आदि सम्बोधनों को उपयोग में लाया गया है। कवि ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कह देता है–

'जिन पुरुषों का चित्त न तो कभी स्त्रियों में लगा हो और न कभी साहित्यरूपी अमृत के समुद्र में ही लग्न हुआ हो, वे भला मेरे इस प्रयास को क्या जान पायेंगे।'

चिकित्सा के अधिकारी चिकित्सक को कैसा होना चाहिये– इसके लिये कवि कहता है–

गुरोरधीताखिलवैद्यविद्यः
पीयूषपाणिः कुशलः क्रियासु।
गतस्पृहो धैर्यधरः कृपालुः
शुद्धोऽधिकारी भिषगीदृशः स्यात्।।

चिकित्सक पहले निदान विधि के अनुसार रोग का निर्णय करे, इसके बाद रोग को साध्य होने का निश्चय करे और इसके पश्चात् अपनी चिकित्सा प्रारम्भ करे–

आदौ निदानविधिना विदध्याद् व्याधिनिश्रयम्।
ततः साध्यं परीक्षेत पश्चाद् भिषगुपाचरेत्।।

स्वस्थ व्यक्ति और रोगी दोनों के लिये पथ्य (उचित खान-पान एवं रहन-सहन) का बडा महत्त्व है। यदि मनुष्य सदा पथ्य सेवन पर ध्यान देता रहे तो दोनों ही स्थितियों में औषध की आवश्यकता नहीं रहती। इसी बात को कवि देखिये काव्यात्मक शब्दों में प्रस्तुत करता है–

पथ्ये सति गदार्त्तस्य किमौषधनिषेवणैः।
पथ्येऽसति गदार्त्तस्य किमौषधनिषेवणैः।।

यह वैद्य जीवन पाँच विलासों में वर्णित है। प्रथम विलास (खण्ड) में ज्वर चिकित्सा का वर्णन है। दूसरे विलास में अतिसार ग्रहणी आदि का ावर्णन है। तीसरे विलास में प्रायः स्त्रीरोगों की चिकित्सा वर्णित है तो चतुर्थ विलास में शेष रोगों की चिकित्सा के सरल योगों का वर्णन है। अन्तिम पञ्चम विलास में वीर्यवर्धक कृष्ययोगों के अतिरिक्त कुछ रसौषधियों का उल्लेख किया गया है। इसके कतिपय योग दृष्टव्य हैं–

मृगमदविलसल्ललाटमध्ये!
मृगमदहारिणि!लोचनद्वयेन।
मृगनृपतिनूदरश्रि!
पित्तज्वरमहहद्यति रैणवः कषायः।।

अनेक सरस सम्बोधनों के साथ एकौषधि के प्रयोग का यह साहित्यिक वर्णन ध्यान देने योग्य है, जिसमें कहा गया है कि केवल एक पित्तपापडे का ही क्वाथ पित्तज्वर का नाश करता है।

अन्य सुलभ और सरल प्रयोग इस प्रकार व्यक्त किये गये हैं–

कुक्षिशूलाभशूलघ्नं विविधास्रतिसारजित्।
सेवेत सागुडं बिल्वं बिल्वतुल्यपयोधरे।।

अर्थात् उदशूल और आमजन्यशूल को तथा अनेक प्रकार के रक्तातिसार को नष्ट करने वाले कच्चे बेल के चूर्ण को गुड़ के साथ सेवन करना चाहिये।

श्वास-कास में अदरख का रस मधु के साथ सेवन करना हितकर है–

शृङ्गवेररसो येन मधुना सह योजितः।
श्वास-कासभयं तस्य न कदाचित् कृशोदरि।।

इसी प्रकार कहा गया है कि गिलोय का स्वरस शहद के साथ सेवन करने से सभी प्रकार के प्रमेह विनष्ट होते हैं और सोंठ के चूर्ण को गोमूत्र के साथ पीने से कामला (पीलिया) दूर होता है। सोंठ का चूर्ण एक दो ग्राम तथा गोमूत्र 50मिली. होना चाहिये। गोमूत्र बिना ब्याई बछिया का अधिक लाभप्रद होता है। गोमूत्र को छान कर लेना चाहिये तथा एक सप्ताह से अधिक नहीं सेवन करना चाहिये। एक-दो दिन रूक कर इसे पुनः सेवन किया जा सकता है जो व्यक्ति अत्यधिक कमजोर दुबले-पतले हैं उन्हें गोमूत्र नहीं सेवन करना चाहिये।

गिलोय के स्वरस की मात्रा 10-15 मिली. होनी चाहिये और इसमें एक-दो छोटे चम्मच भर कर शहद मिला कर सेवन करना चाहिये। गिलोय को अमृता कहा गया है। इसका क्वाथ बनाकर भी सेवन किया जा सकता है। वायु के रोगों में इसका क्वाथ गोधृत मिलाकर, पित्तरोगों में मिश्री मिलाकर तथा कफजन्यरोगों में मधु मिलाकर सेवन करना चाहिये।

वैद्यजीवन का अन्तिम श्लोक बड़ा प्रभावी है–

नारायणं भजतरे जठरेणयुक्ताः
नारायणं भजत रे पवनेनयुक्ताः।
नारायणं भजत रे भवभीतियुक्ताः
नारायणात् परतरं न हि किञ्चिदस्ति।।

अर्थात् हे उदरोग से युक्त मनुष्यों! आप नारायणचूपर्ण का सेवन करो। हे वातरोग से पीडित मनुष्यो! आप नारायणतैल को उपयोग में लाओ। विधि ताप तथा रोगादि के दुःख से भयभीत हुये मनुष्यो! आप भगवान् नारायण को भजो, क्योंकि नारायण से बढकर अन्य कुछ श्रेष्ठ नहीं है।

इन तीन काव्यमय संस्कृत ग्रन्थों के अतिरिक्त चतुर्थ संस्कृत भाषा में निबद्ध ग्रन्थ 'हरिविलासकाव्य' है। इसके प्रमि सर्ग में कृष्ण की बाल लीला, द्वितीय में रासक्रीड़ा, तृतीय में ऋतुवर्णन, चतुर्थ में अभगवत् वर्णन और अन्तिम पञ्चम में कंसवध का सरस छन्दों में वर्णन किया गया है। इनके

द्वारा रचे दो अन्य ग्रन्थ 'रत्नकलाचरित' तथा 'वैद्यकाव्य' मराठी भाषा में निबद्ध है। कहा जाता है कि जैसे भवभूति को शिखरिणी, भारवी को वंशस्थ छन्छ पसन्द है, वैसे लोलिम्बराज को मालिनी छन्द अधिक पसन्द है–

भवभूतेः शिखरिणी वंशस्थं भारवैर्यथा।
तथा विराजते चास्य मालिनी कीर्तिशलिनी।।

'कीर्तिर्यस्य स जीवति' इस उक्ति के अनुसार जब तक साहित्य अनुरागी चिकित्सक समाज इस धरा पर विद्यमान रहेगा तब तक इस रसिकराज लोलिम्बराज की यह प्रशस्ति गाता रहेगा–

सरसवचनगुम्फो दातृताकल्पवृक्षो
विजितकविकदम्बो डाकिनीभतिभेत्ता।
त्रिदशसदसि वाच्यो रोगिणां रोगहन्ता
जयति धरणिपीठे लाल लोलिम्बराजः।।

अध्यक्ष,
राजस्थान आयुर्वेद विज्ञान परिषद्
जयपुर